International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
www.socialresearchjournals.com
Volume 2; Issue 12; December 2016; Page No. 85-87

आधुनिक विज्ञान बनाम हाशिए के नए विमर्श : एक नारीवादी नज़रिया

अतुल कुमार मिश्र
शोध छात्र, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध-पत्र में जेंडर और विज्ञान के अंतर्संबंधों के आईने में विज्ञान की सत्तात्मक संरचना और हाशिए के विमर्शों (सबाल्टर्न डिस्कोर्स) द्वारा इसे दी गई दार्शनिक चुनौतियों के संदर्भ में आधुनिक विज्ञान का एक आलोचनात्मक पक्ष सामने रखने की कोशिश की गई है। जेंडर्ड विज्ञान के अपने इनबिल्ड श्रेष्ठताबोध में समाहित नस्लीय एवं यूरोपीय आग्रहों को सामने लाते और उससे अनलर्न होने की प्रक्रिया में एक नए तरह के वैकल्पिक/नारीवादी विज्ञान को रचने/गढ़ने की सबाल्टर्न/नारीवादी कोशिशें इस शोध-पत्र का मुख्य विषय हैं।

मूल शब्द: आधुनिक विज्ञान और हाशिए के नए विमर्श, जेंडर और विज्ञान, नारीवाद और विज्ञान

प्रस्तावना

जेंडर और विज्ञान के अंतर्संबंधों के क्रम में पुरुषों द्वारा रचा-गढ़ा गया पितृसत्तात्मक एवं पुरुषीय आधुनिक विज्ञान जो तार्किकता के सिद्धांत (Theory of Rationality) के साथ उद्भूत होता है, और 'जानने वाले' (Knower) के सामाजिक-ऐतिहासिक परिस्थितियों के सापेक्ष होता है, उत्तर औपनिवेशिकता के अन्तर्गत ज्ञान के ऐतिहासिक निर्यातवाद के सिलसिले में एक नई 'ज्ञानशास्त्रीय' समस्या से रूबरू होता है कि सभी ज्ञान, जिसमें ज्ञान का समाजशास्त्र भी शामिल है, अपने समाज और इतिहास का प्रतिफलन है और इस तरह जाने जा सकने वाले 'सत्य, 'ज्ञान' एवं 'यथार्थ' सम्बंधी आधुनिक विज्ञान की धारणाएं खंडित होती हैं। इनके वस्तुगत अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगता है और इन्हें एक विशिष्ट समय एवं संस्कृति की भाषाई उपज के बतौर माना जाता है। इस प्रकार विज्ञान का जेंडर विश्लेषण हमें किसी मनुष्य मात्र के सार्वभौमिक 'यथार्थ' के बजाय पुरुष और स्त्री (स्त्री के अन्तर्गत भी अश्वेत स्त्री, दलित स्त्री, आदिवासी स्त्री) के अलग-अलग 'यथार्थों' से परिचित कराता है।

तर्क से विज्ञान तक की मनुष्य यात्रा

आज हम अपने चारो तरफ जिस वैज्ञानिक ज्ञान को सत्य का एकमात्र प्रतीक और जरिया मानते हैं, वह वैज्ञानिक ज्ञान मनुष्य की चेतना में स्वयं प्रस्फुटित होने वाला कोई स्वाभाविक ज्ञान नहीं है, बल्कि मानवता द्वारा प्रकृति पर किए गये श्रम की सदियों से संचित सांस्कृतिक धरोहर के रूप में यह हमारे सामने आता है। मनुष्य का अभ्यास यानि बाहर की वास्तविकता पर किया गया उसका श्रम, वह प्रक्रिया है, जो उसके अंदरूनी चेतनात्मक जगत को बाहर की वास्तविकता से जोड़ती है। इस प्रकार मनुष्य की तर्कबुद्धि, ईश्वर द्वारा दी गई नियामत नहीं है, जैसा कुछ धर्मों में माना गया है, न ही मनुष्य का विवेक उसकी आदि व मूल प्रकृति का स्थायी हिस्सा है जैसा देकार्त या कांट जैसे विचारक मानते थे और न ही मनुष्य की तर्कबुद्धि उसकी जैविक आवश्यकता है जैसा ह्यूम या रसेल मानते हैं। बल्कि असल में अपने अभ्यास द्वारा मनुष्य अपनी तर्कबुद्धि का विकास करता है। यह विकास एक व्यक्ति के जीवन तथा मानवता के इतिहास दोनों में होता है और इस विकास का संदर्भ हमेशा सामाजिक होता है। वास्तविकता में ज्ञान प्राप्त करने का कोई भी अभ्यास अपने समय के ऐतिहासिक व सामाजिक संदर्भों द्वारा सीमित रहता है। तर्कबुद्धि का कोई भी प्रयोग किन्हीं मूल पूर्वधारणाओं से शुरु होता है तथा सिर्फ तर्कबुद्धि के इस्तेमाल से इन पूर्वधारणाओं से बाहर नहीं जाया जा सकता। यह बदलते हुए संदर्भों की वास्तविकता ही होती है, जो अभ्यासरत मनुष्यों को अपनी मूल मान्यताएं व पूर्वधारणाएं बदलने के लिए मजबूर करती है। यहाँ तक कि किसी निश्चित काल व स्थान पर मनुष्यों को जो 'दिखाई' देता है तथा जिसे वे प्रमाण मानते हैं, वह भी काल एवं स्थान के संदर्भ पर ही निर्भर करता है। जैसे कि एक समय भौतिकशास्त्रियों के लिए प्रकाश एक विद्युत चुम्बकीय तरंग था, बीच में इसे फोटॉन कणों की धारा माना जाने लगा तथा अब क्वांटम भौतिकी के विकास के बाद यह तरंग एवं कण दोनों है तथा दोनों नहीं भी है। इस प्रकार हेगेल के कथन "वास्तविकता तर्कबुद्धि सम्मत है और तर्कबुद्धि सम्मत ही वास्तविक है" (All that is real is rational : and all that is rational is real) के आधार पर बकौल एंगेल्स कहा जा सकता है

कि मानव समाज व ज्ञान के इतिहासक्रम में विकास के साथ-साथ मनुष्य द्वारा तर्कसम्मत समझी जाने वाली व उसे 'दिखाई' देने वाली वास्तविकता का द्वन्द्वात्मक विकास होता रहा है और इस विकास प्रक्रिया का आधार मनुष्य का सामाजिक अभ्यास है।

विज्ञान बनाम हाशिए के नए विमर्श

सामाजिक अभ्यासों की इस प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप ही पुरुषों (नस्ल, वर्ग व उत्तर उपनिवेशवाद के आधार पर गोरों, पूंजीपतियों एवं यूरोपीय पश्चिमी देशों) द्वारा गढ़ा गया विज्ञान नयी अस्मिताओं एवं नये विमर्शों द्वारा प्रश्नांकित किया जाता है। विज्ञान का इन अस्मिताई विमर्शों के साथ मुख्य झगड़ा ही 'वस्तुनिष्ठता-विषयनिष्ठता' (Objectivity-Subjectivity) की धारणाओं को लेकर है, जिन पर दोनों का आधार खड़ा है। विज्ञान की 'वस्तुनिष्ठ' एवं 'निरपेक्ष' दुनिया के समांतर 'विमर्शों' द्वारा एक अलग दुनिया को 'कंस्ट्रक्ट' (निर्मित) किया जाता है और यह वही नहीं होती, जिस 'वास्तविक' दुनिया से हमारा वास्ता होता है। विमर्श अपने आप में सीमित और आधारभूत संकल्पनाओं, अवधारणाओं की नींव रखता है। यह किसी ख़ास मीमांसा की अवधारणा होती है, जिससे मिलकर आधुनिक ज्ञान बनता है।

यद्यपि विज्ञान में आत्मप्रश्नेयता (Reflexivity) का गुण और पैराडाइमों के परिवर्तन के साथ हुई क्रांतियाँ विज्ञान के सतत बदलावों (या लगातार आगे बढ़ने, विकसित होने) की बात को पुष्ट करती हैं। उदाहरण के लिए क्लासिकीय भौतिकी की निरपेक्षता, निर्धारकता और कार्य-कारण सम्बंधों की अनिवार्यता आइंसटीन के सापेक्षता सिद्धांत एवं क्वांटम भौतिकी के नये पैराडाइम के निर्माण के साथ अब तक चली आ रही वस्तुनिष्ठता, सार्वभौमिकता जैसी धारणाओं का खंडन करती है और बताती है कि ज्ञान, सत्य एवं यथार्थ की स्थान-काल, एवं ज्ञाता (knower) के परिप्रेक्ष्यों से परे कोई अवधारणा सम्भव नहीं है। यह वही बात है जो सबाल्टर्न एवं अस्मिता विमर्शों द्वारा समस्त ज्ञान-विज्ञान को लेकर कही जाती है, सवाल उठता है कि फिर विज्ञान और सबाल्टर्न के बीच इस विवाद का कारण क्या है? इतिहास में जाएं तो आधुनिकता के अन्तर्गत जन्मा आधुनिक विज्ञान तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों के साथ अंतर्संबंधों के क्रम में ही पैदा हुआ था और इसलिए व्यापक सामाजिक स्तर पर उस समय वैज्ञानिक चेतना का प्रसार दिखता है। समता, स्वतंत्रता एवं बंधुत्व के प्रबोधनकालीन आधुनिक लोकतांत्रिक नारों के पीछे उस वैज्ञानिक क्रांति का भी असर था, जिसने जाति, धर्म, लिंग एवं नस्ल के आधार पर सभी प्रकार के भेदों को नकारते हुए मनुष्य मात्र की समता स्थापित की। इस वैज्ञानिक धारणा के ही परिणाम स्वरूप वोल्ट्सनक्राफ्ट और जे.एस.मिल जैसे सामाजिक सुधारकों द्वारा स्त्रियों की स्थिति में सुधार की कोशिशों के रूप में नारीवाद की उदारवादी धारा का विकास देखा जा सकता है लेकिन जिस तरह धर्म के नकार के साथ आयी आधुनिकता, पूंजीवाद के कब्जे में आकर धर्म के साथ मजबूत गठजोड़ कर लेती है, वैसे ही स्त्री-पुरुष समानता की बातें (और कुछ काम भी) करते हुए पूंजीवादी आधुनिकता का पितृसत्ता के साथ भी गठजोड़ होता है और इस क्रम में आधुनिक विज्ञान (जो हर प्रकार की सत्ता के लिए एक महत्वपूर्ण हथियार था) बुर्जुआ के साथ हितबद्ध एवं जेंडराइज्ड (मैस्कुलिन) बना दिया जाता है।

पितृसत्तात्मक, नस्लीय, पूंजीवादी एवं औपनिवेशिक सत्ताओं के साथ विज्ञान के गठजोड़ का परिणाम यह होता है कि विज्ञान व्यापक समाज के लिए 'इलीट' बनाकर समाज के बड़े हिस्से से काट दिया जाता है और इस तरह विज्ञान; वैज्ञानिक प्रयोगों एवं वैज्ञानिक सिद्धांतों के साथ एक सीमित दायरे में वैज्ञानिकों के बीच ही कैद हो जाता है। विज्ञान और समाज का यह अलगाव ही वैज्ञानिक क्रांतियों के व्यापक सामाजिक प्रभावों और सामाजिक परिवर्तनों के विज्ञान पर प्रभावों की राह में रोड़ा बनता है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि दोनों के अन्तर्सम्बंध पूरी तरह ख़त्म हो जाते हैं। होता दरअसल यह है कि विज्ञान और समाज के बीच अंतर्संबंधों में सत्ता संरचना 'वॉच डॉग' की महत्वपूर्ण भूमिका में रहती है। यही वजह है कि सापेक्षता और क्वांटम के नए वैज्ञानिक पैराडाइम के अन्तर्गत ज्ञान, सत्य एवं यथार्थ की वस्तुनिष्ठता, निरपेक्षता एवं सार्वभौमिकता की धारणाओं में परिवर्तन के बावजूद सामाजिक संदर्भों में वही पुरानी धारणाएं कायम रहती हैं और यही विज्ञान और सबाल्टर्न के बीच विवाद का आधार है।

विज्ञान की सत्ता और विकल्प की तलाश: वैकल्पिक/नारीवादी विज्ञान?

आज जब हम नारीवादी विज्ञान (Feminist Science) या वैकल्पिक विज्ञान की बात करते हैं तो यह महत्वपूर्ण सवाल हमारे सामने आता है कि सब्जेक्टिविटी और ऑब्जेक्टिविटी के मसले पर इनका दृष्टिकोण क्या होगा? क्योंकि नारीवाद और पूरा सबाल्टर्न ही सब्जेक्टिविटी (विषयनिष्ठता) की नींव पर खड़ा है, जबकि विज्ञान का पूरा आधार ऑब्जेक्टिविटी (वस्तुनिष्ठता) है, तो ऐसे में नारीवादी विज्ञान का आधार क्या होगा? इसी तरह विज्ञान की मेथडोलॉजी पर सवाल उठाने वाले नारीवादी विज्ञान की अपनी मेथडोलॉजी किस तरह की होगी? यहाँ एक और बात साफ कर लेना जरूरी है, जो रवि सिन्हा बुर्जुआ विज्ञान और सर्वहारा विज्ञान की बहस में उठाते हुए कहते हैं कि "क्या ज्ञान का प्रत्येक टुकड़ा वर्ग सापेक्ष है? क्या बुर्जुआ वर्ग के लिए धरती गोल है लेकिन सर्वहारा का ज्ञान इस बारे में कुछ अलग किस्सा बयान करेगा? तर्क पद्धति को सही-सही पकड़ा जाय तो ऐसे प्रश्नों में अभिव्यक्त विभ्रम की गुंजाइश नहीं रह जाती। यहाँ जिस यथार्थ की बात हो रही है, वह सामाजिक यथार्थ है और जिस ज्ञान की बात हो रही है, वह समाज के

बारे में है। ज्ञाता इस सामाजिक यथार्थ का हिस्सा है और सामाजिक हस्ती के रूप में इसी यथार्थ से बना हुआ है। कहा ये जा रहा है कि उसका सामाजिक ज्ञान उसकी स्वयं की बनावट से स्वतंत्र नहीं हो सकता। अब प्रश्न यह उठ सकता है कि ज्ञान का स्वरूप यदि ज्ञाता सापेक्ष है तो क्या सर्वहारा के ज्ञान को बुर्जुआजी के वर्ग-ज्ञान से बेहतर माना जा सकता है"? लेकिन नारीवादी विज्ञान इस अर्थ में सर्वहारा के विज्ञान से आगे की बात है क्यों कि यह सिर्फ़ वर्ग के रूप में शासन सत्ता पर अधिकार की बात नहीं है, बल्कि वैज्ञानिकता की आड़ में न्यायोचित करार दिए गये दमन, शोषण एवं उत्पीड़न से मुक्ति की बात है। एक सवाल यह भी उठता है कि क्या नारीवादी विज्ञान, पुरुषों द्वारा रचित आधुनिक विज्ञान के बरक्स स्त्रियों द्वारा स्त्रियों के दृष्टिकोण से नया विज्ञान रचे जाने की कोशिश है? शायद ऐसा हो लेकिन जितना यह कुछ नया 'कंस्ट्रक्ट' करने की कोशिश है, उससे ज्यादा वर्तमान आधुनिक विज्ञान को 'डिकंस्ट्रक्ट' करने और उससे 'अनलर्न' होने की प्रक्रिया भी है पर 'अनलर्न' होने की इस प्रक्रिया के बावजूद जैसा कि आशीष नंदी कहते हैं कि "कुछ विज्ञान तो बचाना ही होगा, जो साझे अनुभवों (common sharing) का आधार होगा और जिस पर उस नये किस्म के विज्ञान को ढूढ़ा या रचा जा सकेगा जिसके अंदर 'डॉमिनेंट पॉवर स्ट्रक्चर रिलेशनशिप' (वर्चस्वशाली सत्तात्मक संबंध) पैदा नहीं हुआ है"।

मौजूदा हालात में सवाल सिर्फ ज्ञान मीमांसा का नहीं रह गया है। सवाल यह भी नहीं कि वर्तमान के बीच पाट पर खड़े अतीत से ज्यादा सीख ली जाए या भविष्य की चिंता की जाए। दरअसल आज 'महत्वपूर्ण क्या है' और 'क्यों है' का संकट अधिक गहरा है। 'ईश्वर की मृत्यु की घोषणा' से जो गद्दी मनुष्य को प्राप्त हुई थी, उस पर एक ख़ास वर्ग, जेंडर एवं नस्ल का मनुष्य बैठा था। चिंतन के केन्द्र में अब किसी एक 'मनुष्य' की नहीं वरन् अलग-अलग अस्मिताओं के 'मनुष्यों' की उपस्थिति ज़रूरी है। अब ज्ञान-विज्ञान-दर्शन के उत्पादन और वितरण का एक ऐसा आधार बनाना ही होगा, जो सत्ता के अनुरूप न होकर जीवन, मनुष्य चेतना और समाज को संवर्धित करे। ऐसे ज्ञान को सत्ता से स्वतंत्र होकर एक ऐसे स्वायत्त स्वरूप में अपनी रूपरेखा देनी होगी जिसमें ज्ञान अपने में श्रेष्ठ और निम्न का वर्गीकरण न करे अथवा अति या परम ज्ञान प्राप्त करने वाले को स्वतः ही श्रेष्ठत्व या देवत्व की प्राप्ति न हो जाय। डॉमिनेंट पॉवर स्ट्रक्चर संबंधों से मुक्त एक नए तरह के विज्ञान (जो मनुष्य/समाज/प्रकृति केंद्रित हो, एकलता के बरक्स बहुलतामूलक हो) को रचे-गढ़े जाने की कोशिश इसी दिशा में बढ़ाया जा रहा कदम है और 'नारीवादी विज्ञान' की संकल्पना इसी कदम का पहला पड़ाव।

संदर्भ

1. Keller, Evelyn Fox. Reflections on Gender and Science. New Haven and London: Yale University Press. 1985, 3.
2. ग्रीयर, जर्मेन. (2008). *बधिया स्त्री*. (मधु बी. जोशी, अनु). नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. पृ.15.
3. Thompson, John B. (1996). *Ideology & Modern Culture*. Cambridge: Polity Press. P-49.
4. सापेक्षता सिद्धांत और क्वांटम भौतिकी ने जिस वस्तुनिष्ठता पर सवाल उठाये, वह विराट एवं सूक्ष्म जगत से सम्बंधित थी। प्रत्यक्ष जगत में न्यूटोनियन भौतिकी की वस्तुनिष्ठता पाठ्यपुस्तकों से लेकर सामाजिक यथार्थ तक में यथावत बनी रही।
5. सिन्हा, रवि (2003, जनवरी-मार्च). उत्पीड़ित के ज्ञानशास्त्र की भूमिका. *संधान*. (सुभाष गाताड़े, सं).
6. *समयान्तर*. आशीष नंदी का साक्षात्कार. 2004, 39.